ओ३म्

खालसा इतिहास दर्पण

प्रथम भाग

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तकालय
पु परिग्रहण क्रमांक 5017
दयानन्द महिला महा

लेखक तथा प्रकाशक—

आचार्य स्वामी रुद्रानन्द शास्त्री

आर्य मुनाजिर

आर्य समाज शाहाबाद (करनाल)

प्रथमवार २०००] वैशाख २००७ [मूल्य ।-)

भूमिका

हिन्दु और सिख भाइयों में बहुत सी बातें विवादस्पद चली आ रही हैं। और कुछ साधारण जन मिथ्या इतिहास के अथवा मौखिक कथाओं के आधार पर गुरुमहाराज को और का और कुछ समझ रहे हैं। न तो स्वयं इतिहास पढ़ते हैं और न निर्णय करने का ज्ञान रखते हैं। भजनोपदेशकों ने और अन्धकचरे ज्ञानियों ने गुरु जी महाराज को नानारूप देने की चेष्टा करके अन्धकार में स्वरूप दिखाया है जिसको देख कर मनुष्य भूल रहे हैं। इसलिए मैंने इस दर्पण द्वारा प्रकाश में रूप दिखाया है। पढ़ने वाले सनेमाघर से बाहिर आकर पढ़ेंगे तो बड़ा आनन्द आवेगा। मैंने कहीं भी द्वेष अथवा पक्षपात से काम नहीं लिया और न मेरा हौलडर कहीं व्याकुल हुआ है, श्री पूज्य गुरु गोविन्दसिंह जी की भांति छलांगें लगाता भ्रान्ति सागर से पार हो गया है। इससे जनता को बहुत लाभ होगा।

निवेदक—

आचार्य स्वामी रुद्रानन्द शास्त्री

आर्य मुनाजिर

पन्थ पर एक बड़ी भारी कुरबानी

उत्तरी हिन्द में एक छोटा सा देश पूर्वी पंजाब है। जिसमें सिखों के दसवें गुरु श्री गोबिन्द सिंह जी बड़े वीर पुरुष हुए हैं, जिन्होंने अपना पन्थ चलाने के लिए सर्वस्व कुरबान कर दिया। किन्चिन्मात्र भी भीरुता नहीं दिखाई चारों प्यारे साहिबज़ादे, अजीतसिंह, बाबा जुझारसिंह, बाबा जोरावरसिंह, बाबा फतहसिंह इस प्रकार पन्थ की वेदी पर चढ़ा दिये जैसे साधारण जन काली देवी की मूर्ति पर बकरों को चढ़ा देते हैं। बकरे निज सन्तति नहीं होती पुत्र अङ्ग से उत्पन्न होता है पुत्र में कितना स्नेह होता है, पुत्र ही नहीं अपनी प्यारी पत्नियों को भी भुला दिया, पूजनीय माता जी की भी सुध बुध नहीं ली आनन्दपुर आनन्द के घर को भी त्याग दिया। आनन्द पुर के साथ ही निज प्यारा पंजाब भी छोड़ दिया फिर सर्व आयुभर दर्शन नहीं किए। यद्यपि आपका जन्म पटना में हुआ था परन्तु नौ वर्ष की अवस्था में आनन्दपुर आ गए थे। वीर गोबिन्दसिंह जी ने पन्थ की खातिर बड़े बड़े कष्ट सहे। जिनका जिक्र आगे किया जावेगा।

गुरु गोबिन्दसिंह का जन्म

गुरु गोबिन्दसिंह जी के पिता का नाम तेगबहादुर जी था और माता का शुभ नाम गूजरकौर जी था। आपका जन्म पटना नगर में पोह सुदि ७ (२३ पोह) संवत्सर १७२३ विक्रमी तदनुसार २२ दिसम्बर १६६६ ई० को हुआ। नौ वर्ष की अवस्था तक आपका पालन पोषण पटना साहिब में होता रहा। गुरु तेग बहादुर जी परिवार को पटना में छोड़कर पंजाब में आ गए और आनन्दपुर नगर बसाया अब परिवार को भी वहीं बुला लिया। इसके विषय में गुरु गोबिन्दसिंह जी स्वयं इस प्रकार बयान करते हैं।

अथ कविजन्म कथनं ॥ चौपाई ॥

सुर पितु पूरब कियसि पयाना। भान्ति भान्ति के तीरथ नाना।
जब ही जात त्रिवेणी भये। पुन्न दान दिन करत बिताए।१
तहीं प्रकाश हमारा भयो। पटना सहर बिखेभव लयो।
भद्र देस हमको ले आये। भान्ति भान्ति दाइअन दुलराए।२
कीनी अनक भान्ति तन रछा। दीनी भान्ति भान्ति की सिछा।
जब हम करम धरम मो आए। देवलोक तव पिता सिधाए।३

इति स्री बचित्र नाटक ग्रन्थे नाम सप्तमोध्याय समाप्तम्।

अभिप्राय गुरु जी कहते हैं मेरे पिता जी पूर्व की ओर तीर्थ यात्रा को गए। त्रिवेणी पर जाकर पुण्य दान

किए तहां तब हमारा जन्म पटना नगर में हुआ। फिर भद्रदेस ले आए। जहां पर दाइयों ने खूब पालन पोषण किया। अनेक प्रकार की तन की रक्षा की और नाना प्रकार की शिक्षा दी।

प्रश्न—आप कहते हैं, गुरु गोबिन्दसिंह जी ने पन्थके वास्ते बड़े बड़े कष्ट सहे और सर्वस्व कुर्बान कर दिया, परन्तु हमारी समझ में धर्म के लिये सर्व दुःख उठाए धन सम्पत्ति घरबार पुत्र कलत्र माता व परिवार सर्वस्व कुर्बान करके स्वशरीर भी बलिवेदी पर चढ़ा कर चलते बने और यश प्राप्त कर गए।

उत्तर—आप धर्म समझें दीन समझें ईमान समझें, हम तो वही समझेंगे जो गुरु महाराज अपने मुखारबिन्द से कह गये हैं और इतिहास लेखकों ने जिसको स्वीकार किया है। देखिए बिचित्र नाटक में गुरू जी चिट्टे बाजां वाले इस प्रकार फरमाते हैं।

अब मैं अपनी कथा बखानो। तप साधन जेहविधि मोहे आनो।
हेमकूट पर्वत है जहां। सपत सृङ्ग सोभत हैं तहां ॥१॥
सपत सृङ्ग तेह नाम कहावा। पंड राज जहं जोग कमावा।
तहं हम अधिक तपस्या साधी। महाकाल कालका अराधी ॥२॥
एह विधि करत तपस्या भयो। द्वै ते एक रूप हो गयो।
तात मात मोरे अलख अराधा। बहुविधि जोग साधना साधा ॥३॥

तिन जो करी अलख की सेवा। ताते भये प्रसन्न गुरु देवा।
तिन प्रभु जब आयस मोहे दीआ। तब हम जन्म कलूमहि लीआ४
विचित्र नाटक अ० ७

इसका अभिप्राय यह है कि गुरु महाराज ने अपनी कथा बयान की है कि मैं तप कर रहा था परमेश्वर ने मुझे बुला कर कहा जाओ तुम धर्म प्रचार करो और कहा।

अकाल पुरुष वाच ॥ चौपाई ॥
मैं अपना सुत तोहि निवाजा। पंथ प्रचुर करबे कहु साजा ॥२६॥

प्रभु ने कहा मैंने तुम्हें अपना पुत्र बनाया है क्योंकि तुम एक अच्छा पन्थ चलाओ, अब क्या संदेह रहा कि अकाल पुरुष स्वयं कह रहा है मैंने तुम्हें पन्थ चलाने को बनाया है। अब गुरु जी की बाबत लिखा है।

कविवाच ॥ दोहा ॥
ठाड भयो मैं जोर कर बचन कहा सिर नाइ।
पंथ चले तब जगत में जब तुम करहु सहाय ॥ अ० ७।३०

अर्थ—गुरु गोबिन्दसिंह जी महाराज कहते हैं मैं परमेश्वर के सामने हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया और सिर झुका कर खड़ा हो गया, आपने जो पन्थ चलाने का हुकम दिया है यह मुझे स्वीकार है, परन्तु पन्थ तब चलेगा जब आप सहायक होंगे। अब ज्ञानी पुरुष विचार करें कि पन्थ चलाने के लिए पिता पुत्र परामर्श कर रहें

हैं या धर्म के लिये। और गुप्त रूप में सोच रहे हैं कि पन्थ का श्रीगणेश किस प्रकार किया जावे अन्त में मार्ग ढूंढ निकाला। हिन्दुओं को सिख बनाने का षड्यंत्र रचने का विचार किया। गुरु जी ने विचार किया और पन्थ रचने का विधान यूँ किया कि एक मेला लगाया जावे उसमें पन्थ बनाने का ढंग बनाया जावे इस कारण गुरु नानक देव जी की जन्म शताब्दि मनाई जावे अतः सूचना दी गई कि प्रथम वैशाख १७५६ वि. को सतुलुज के किनारे पर एक बड़ा भारी जोड़ मेल होगा संगतों के नाम हुकमनामे जारी कर दिए। बड़ी धूमधाम की तय्यारियां होने लगीं। पंडाल बनाया गया लङ्गर जारी हो गए। संगतें इकठी होने लगी मेला खूब भर गया। प्रथम वैशाख १७५६ को दो बजे रात के रणजीत निकारह बजा निगारे पर चोट का पड़ना था, कि संगतें सतलुज पर स्नान कर के पडाल में आ विराजीं। आसा की बार लगाई गई। रागी राग गाने लगे जब सूर्य उदय हुआ तो गुरु महाराज तख्त पर आ विराजे। ऊँचे स्वर से सर्व संगत को सम्बोधन किया खालसा वीरो इस समय खालसा पन्थ के निर्माण व प्रचार के लिए एक सिर की आवश्यकता है। जो सिर देना चाहता है आगे आए और कुर्बानी दे देखते

क्या हो आगे बढ़ो। सन्नाटा छा गया लोक सहम गए। एक पुरुष आगे आया और कहा मैं तय्यार हूं। यह सुन कर गुरु जी ने उसका हाथ पकड़ा और तम्बू में ले गए जो पहिले ही लगा रखा था और भविष्य के सर्व विचार इस तम्बू के गर्भ में छुपे हुए थे। गुरु जी ने तलवार का एक वार किया सिर धड़ से जुदा हो गया रुधिर की धारा बाहिर को आई भीरु डरते भागने लगे इतने में गुरु गोबिन्दसिंह जी महाराज रुधिराप्लुत खड़ग हाथ में लिए हुए फिर तख्त पर आ खड़े हुए और पुकारा वीरो एक सिर की और आवश्यकता है आओ आगे आओ काम ठंडा न पड़े। लोक आश्चर्य में थे न जाने कितने सिरों की आवश्यकता है। अस्तु एक वीर और आगे बढ़ा गुरु जी मैं तय्यार हूँ। गुरुजी ने हाथ पकड़ा और पहिले पुरुष की भान्ति तम्बू में ले गए और सिर धड़ से जुदा कर दिया रुधिर की धारा बाहिर आई लोक घबराए मुख शुष्क हो गए। इतने में गुरु जी महाराज फिर बाहिर आए और पूर्ववत्पुकारा बहुत से लोकों के पांव उखड़ गए परन्तु करें तो क्या करें, किंकर्तव्यता मूढ़ होकर इधर उधर देख रहे हैं पन्थ की नई झांकी है, नया ढंग है। बस तीसरा भी बलिवेदी पर चढ़ गया। चौथा और पांचवाँ भी शहीद कर

दिए गए प्रकार एक ही था। अब लोगों ने विचारा गुरु जी उन्मत्त हो गए इनको बाँध देना चाहिए परन्तु किसी की हिम्मत न पड़ी। अन्त में गुरु जी पाँच पर जाकर स्वयं ठहर गए और उलटे मार्ग पर चले अब मौत के स्थान जीवन संचार होने लगा सब के सिर धड़ों से जोड़ दिए पाँचों मूर्तियां फिर जीवित हो गईं और उनको खालसा सजाया गया।

समीक्षक—खालसा कैसे सजाया गया, क्योंकर सजाया गया, मुर्दों को कैसे जीवित किया गया यह एक विचित्र नाटक है यह रहस्य पट में एक मदारी का खेल जान पड़ता है। गुरु महाराज कोई बयान देते नहीं। अपने आप ज्ञान में कुछ आता नहीं प्रत्यक्ष कुछ है नहीं अनुमान के घोड़े दौड़ाए जाते हैं। कुछ लेखक कहते हैं, तम्बू में बकरे बन्धे हुए थे वह झटकाए गए और कोई किसी प्रकार की करामात अथवा चमत्कार नहीं केवल सिखों की दृढ़ताकी परीक्षा लेनी थी। ज्ञानी लालसिंह और उनके साथी कहते हैं। मनुष्य ही काट कर जीवित किए गए थे इसके अतिरिक्त करामात ही क्या हुई। गुरु जी ने कुछ बताया नहीं, तम्बू बोला नहीं। पाँचों सिख मदारी के जमूरे (बालके) की भान्ति मौन साध गए। पूछें तो

किससे पूछें निर्णय कैसे हो। हमारा निर्णय तो सोलह आने पक्का है। पन्थ चलाना था वह संसार को चला कर प्रत्यक्ष दिखला दिया।

आपको स्मरण होगा पांचों प्यारों को सजाकर तम्बू से बाहर लाए लोक देखकर चकित हो गए अब गुरु जी ने कहा इन प्यारों को अमृत छकाया अर्थात् पिलाया जावेगा। सबको आमने सामने खड़े करके अमृत पिलाया गया मनुष्यसे खालसा बनाया गया। अब यह हिन्दू जाति का पृथक फिरका अथवा सम्प्रदाय बन गया दशमेश जी की इच्छा पूर्ण हो गई उद्देश्य पूरा हुआ। इनको रहित का उपदेश किया इन पाँचों प्यारों के नाम-१. भाई दयासिंह जी, २. भाई धर्मसिंह जी, ३. भाई हिम्मतसिंह जी. ४. भाई मुहकमसिंह जी, ५. भाई साहबसिंह जी रखे गए। अब यह पाँच प्यारे तो अमृत पीकर मतवाले हो गए और पूर्ण खालसा बन गए। तवारीख खालसा ज्ञानी लाल सिंह पृ० ८४६।

अब गुरु महाराज अमृत छकने के लिए उद्यत हुए और उन पाँचों प्यारों को हाथ जोड़ कर यों कहा—

चौ०—बारज दोनों हाथ मिलाई। करुणासिन्धु अनक सुखदाई।
श्री आनन यूँ बचन उचारे। सुनहो खालसाजी चिते धारे।

क्यों प्रानद तुम कह गुरु दीना। तस तुम हम कह प्रवीना।
यों सुनकर सत गुरु की बानी। परम खालसे पूज्य प्रमानी।
अमृत कीयससु तबै तय्यारा। मिल बैठे पाँचो तब प्यारा।
गुरुविलास पाठ । १०।

मंत्र पढ़ कर भै तय्यारा। ठाढ भयो एक तब प्यारा।
कृपा सिन्धु आगे तब आयो। वैसे सुधा सुबुद्ध छकायो।
पुन प्रभु जु अरदास कराई। बैठे साच सिंहासन आई।
गुरुविलास पाठ। १०।

गुरु जी के पश्चात् परिवार ने अमृत छका। इसके पश्चात् इस पहाड़ी प्रान्त में प्रचार करते हुए आनन्द पुर आए और एक दीवान सजाया। और बहुत से राजा और लोकों को बुलाया। और उपदेश करने लगे और हुकम दिया।

झूठे यंजू यतन त्यागो। खड्ग धार असि ध्वज पग लागो।
व्याख्या क्रिया भदण त्यागो। जटाजूट रहबो अनुरागो।

इस प्रकार के उपदेश को सुनकर, पहाड़ी राजे और पण्डित उठकर खड़े हो गए और यूं कहने लगे।

यह तो रहित कठिन नहीं होई। चार वरण से करो रसोई।
वेद लोक मत सर्व त्यागी। श्री असि धुज के होए अनुरागी।

द्विज खत्री पूतान के जंजू धर्म तुराई ।
लै भोज इकट्ठा कियो बूड़ी बात बनाई ॥
पूजा मंत्र किरिया सब कर्मा । एह हमते छूटत नहीं धर्मा ।
पितर दंड देवन के कामा । कत छूटत हम से अभिरामा ।
गुरुविलास पा० १० तवारीख खालसा भाग दूसरा पृ० ८५७

अब यह स्पष्ट हो गया है, कि गुरु जी ने पन्थ चलाने के लिए सर्व उपाय और यज्ञोपवीतादि क्रियाओं का और विधानों का खंडन किया और जटाजूट रहने का और सिखी रहित का हुक्म दिया जिसके कारण राजे और पंडित क्रोध से उठकर चले गए और सदैव के लिए शत्रु बन गए और स्पष्ट बाणी से निर्भय होकर कह दिया हम वेद विरुद्ध मत को नहीं मान सकते और अपने सनातन धर्म को नहीं छोड़ सकते। एक भी पहाड़ी राजा सिख नहीं बना वह सिख धर्म से खिजते थे यही कारण ज्ञानी ज्ञानसिंह ने बताया है देखो तवारीख खालसा पृ० ८५८ ज्ञानी जी ने लिखा है कच्चे हिन्दू झड़ गए। गुरु जी ने अपने ही परिवार को सिख बनाया राजाओं से शत्रुता हो गई। इसका चर्चा जो पत्र बादशाह को खुफिया पुलीस ने लिखा है उसमें भी आया है। जैसा कि इस दीवान की

सूचना खुफिया पुलीस ने बादशाह के पास भेजी, कि
गोविन्दसिंह जी ने सब लोकों को बुलाकर कहा है
अपना धर्म छोड़कर खालसा हो जाओ, चारों वर्ण त
दो और एक हो जाओ, इनका जो जुदा जुदा धर्म है
का परित्याग कर दो। और एक जटाजूट खालसा
ग्रहण करो तीर्थों पर न जाओ श्राद्ध तर्पणादि छोड़
अकाल पुरुष के अतिरिक्त देवी देवते न मानों सब
अमृत छक कर एक बर्तन में भोजन करो, जंजु, टिक
धोती, नमाज़, रोज़ह, कब्र, मड़ी, मठादि छोड़ दें,
एक खालसा बन जाओ जब यह उपदेश सुना तो ब्राह
क्षत्री राजपूत उठकर खड़े हो गए। और कहने लगे
तो गुरु नानकदेव जी और अन्य गुरुओं के धर्म के म
वाले हैं। आपका धर्म वेदशास्त्र के विरुद्ध है हम इ
नहीं मान सकते। सनातनधर्म जो ऋषि मुनियों का चल
है एक बालक के कहने पर नहीं छोड़ सकते। तवा
खालसा ज्ञानी लालसिंह दूसरा भाग पृ० ८६०।

समीक्षक—उस समय के हिन्दू खालसा धर्म
वेद विरुद्ध समझते थे। यह ज्ञानी जी ने पुलीस की रि

बताई अब तो कुछ कसर नहीं रही हम चाहे कितना भी प्रमाणों से सिद्ध कर दें कि गुरु जी ने पन्थ की खातिर सब किया खुफिया पुलिस की रिपोर्ट भी उपस्थित करदी फिर भी टें टें करते रहेंगे।

लोकों का स्वभाव ही ऐसा है जैसा कि कबीर भक्त ने कहा है—

रंगी को नारंगी कहें बने दूध को खोया।
चलती को गाड़ी कहें, देख कबीरा रोया॥

कबीरा रोवे या हंसे लोक तो चलती को गाड़ी ही कहेंगे। बहुत दौड़ेगी तो रेलगाड़ी कहेंगे, अथवा मोटर गाड़ी कबीर भक्त होगा तो कबीर पंथी जाने लोक गाड़ी कहना थोड़ा ही छोड़ेंगे। ठीक इसी प्रकार गुरु गोबिन्दसिंह जी को धर्म का राखा ही कहेंगे। आप जब चमकोर के किले से निकल कर भागे तब भी लोक चिट्टे बाजांवाला ही कहते थे चाहे उस समय एक चिड़ा भी आपके पास न था। भला स्वभाव कैसे छूटे।

देखो पन्थ और धर्म पर विचार करो जिन बातों को आप धर्म कहते हैं गुरू जी ने बल-पूर्वक उनका खंडन

किया है यही कारण युद्ध का हुआ और राजाओं ने आनन्दपुर पर आक्रमण किया सर्व राजे विरोधी हो गए। और गुरू गोविन्दसिंह जी को लिख भेजा। अपने व्याख्यान और उपदेश तथा आदेश बन्द करदें। यह क्यों कहा हिन्दू खालसा पन्थ को अपना विरोधी मानते थे और सनातन धर्म को अपना विरोधी मानते थे। गुरू जी ने आनन्दपुर खाली करने से इन्कार कर दिया। तब पहाड़ी राजाओं ने २० हज़ार सेना लेकर आक्रमण कर दिया। तवारीख खालसा पृष्ठ ८६६। ज्ञानी जी लिखते हैं। २० बीस हज़ार रुपये देकर सूबा सरहिन्द को पहाड़ी राजाओं ने साथ मिला लिया और अन्त को आनन्दपुर को उजाड़ दिया। और गुरू जी महाराज को सपरिवार वहां से निकाल दिया।

प्रश्न—गुरू गोबिन्द सिंह जी महाराज हिन्दू थे अथवा हिन्दुओं के पक्षपाती थे।

उ०—जो लोग यह कहते हैं, गुरू जी महाराज हिन्दू थे अथवा हिन्दुओं के पक्षपाती थे। वह लोग गुरू महा की नीति को बिल्कुल नहीं जानते न खालसा इतिहास का

का ज्ञान रखते हैं। देखो, सुनो और विचारो। जब गुरु महाराज बचपन में पटना नगर में थे तो भीखणशाह ठसके वाले दो हांडिए मिठाई की लेकर पटना पहुँचे, दोनों हांडियां गुरूजी के आगे रखदीं। गुरूजी ने दोनों हांडियों पर हाथ रख दिए। जब लोगों ने पूछा तो बताया इसका प्रयोजन यह है कि मुझे हिन्दू-मुसलमान एक जैसे हैं। यह पहिला प्रमाण है।

दूसरा प्रमाण

दो०—ज्यों ज्यों आवत संगता, अति चित मोद बढ़ाइ।
त्यों त्यों अमृत पीलिए, स्री असि केत मनाइ।
लै आयस गुरुदेव की, स्री खालस महाराज।
प्रगट करयो जग खालसा, हिन्दू तुर्क सिरताज।
चौ०—झूठे पन्थ सब त्याग कै, एक पन्थ दृढ़ कीनो।
परम ज्योति स्री गुरु जी, स्री मुख कह दीनो।

गुरुविलास पाठ १०

यह तीसरा पन्थ हिन्दू और तुर्क का सिरताज कहा अर्थ हिन्दू और मुसलमान दोनों से बढिया बताया। हम यह नहीं कह सकते बढिया कैसे और घटिया कैसे; हम तो केवल यह जानते हैं। खालसा जी दोनों से पथक् हैं।

न जाने लोकों ने हिन्दू कैसे समझ लिया और सिरताज के अर्थ कैसे समझे। जब कि दोनों का सिरताज है तो हिन्दू कैसे हुआ परन्तु लोक तो मनमानी और दिलजानी सिद्धि प्राप्त करते हैं। चाहे कुछ भी हो लोक तो यही कहेंगे रसूल ने चाँद के दो टुकड़े कर दिए। सिख चाहे अपने आपको न हिन्दू माने न हिन्दू का भाई परन्तु हिन्दू ख्वाहमख्वाह गले लग कर सुसराल जाती हुई कन्या की भांति बिलख बिलख कर रो रहे हैं। दादू जी की भान्ति अपने मन के भाव के अनुसार अभिप्राय निकाल लिया। कहते हैं दादू जी जंगल में बैठे तप कर रहे थे। रात को एक कोने से "बेलीराम बेलीराम ओ" शब्द आ रहा है दादू जी ने समझा कोई बड़ा भक्त है। दादू जी शब्दको लक्ष करके चले। आगे गए तो क्या देखते हैं, एक मनुष्य कुआं चला रहा है जब चरसा आता है तो बोलता है "आगया बेलीराम ओ" दादू जी अचम्भे में आकर कहते हैं—

दादू दुनियां बावली कहें चाम को राम।
पूँछ मरोड़ें बैल की लेते अपना काम॥

वाह दाद् जी अपनी भूल को दुनियां के बावले पन पर लगाते हैं। इसी प्रकार संसार अपनी भूल को लोकों पर आरोप करते हैं, गुरु जी के वास्तविक रूप को नहीं समझते। अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त के सदृश ही रूप समझते हैं। कारक और विभक्ति परिवर्तन करना जानते ही नहीं।

चौथा प्रमाण गुरु महाराज का तुर्कों से प्रेम

बुद्धू शाह साढौरे वाला गुरु जी से मिलता रहता था और ५०० पठाण गुरुजी की फौज में नौकर थे। यह बुद्धूशाह ने गुरु जी के पास रखवाए थे। यह भगाणी के युद्ध में प्रथम ही दिवस भाग गए थे। फिर भी कुछ मुसलमान गुरु महाराज के साथ रहे हैं। गुरु महाराज ने विचित्र नाटक में स्वयं लिखा है—

बाबे के बाबर के दोऊ, आप करे परमेसर सोऊ।
दीन साह इनको पहिचानो, दुनीपति उनको अनुमानों।
जो बाबे के दाम न दे हैं, तिन ते गह बाबर के ले है।
दै दै तिनको बड़ी सजाइ, पुनि लै है गहि लूट बनाई।
विचित्र नाटक अ० १३ चौपाई ६, १०॥

इसका अभिप्राय गुरु जी ने यह बताया है कि जो

बाबे की कार नहीं देते उनसे बाबर की औलाद कर ले लेती है क्योंकि यह दोनों भाई हैं और करके अधिकारी हैं। एक तो दुनियां के मालिक हैं दूसरे दीन के स्वामी हैं इनका परस्पर भेद नहीं है। मेरे लिखने का अभिप्राय यह है गुरु गोबिन्दसिंह जी का शाही खानदान से वैर नहीं था। गुरु जी का वैर तो पहाड़ी हिन्दू राजाओं से था जिनके साथ लगभग ३० साल लड़ते रहे औरंगज़ेब की गुरु महाराज ने ज़फरनामे में बड़ी बड़ाई की है। जो इस प्रकार है।

खुशश शाह शाहान औरंगजेब।
किचालाक दस्त अस्त चाबक रकेब॥
कि हुसन जमाल अस्त रोशन जभी।
कि तरतीब दानश ब तदबीर तेग॥

खुदा वंद देगो खुदावंद तेग।
कि रोशन जमीर अस्त हुसनल जमाल॥
खुदावंद बखशिदहे मुलकोमाल।
बखशश कबीर अस्तो दरजंग कोह॥

मलायक सिफत चूँ सुरयाश कोह।
शाहिनशाह औरगजेब आलमीं॥

कि दाराइ दौर अस्त दूर अस्त दीं।

जफरनामह हकायत ८५ से ६५।

यह जफरनामह दीने कांगड़ से औरंगजेब को लिखा है।

अर्थ--ऐ बादशाहों के बादशाह औरंगजेब तू भाग-वान है जो तू हाथ का चालाक है और घोड़े की सवारी का फुर्तीला है। रूप का सुन्दर और बड़ा ज्ञानी (रोशन ज़मीर) है देशों का स्वामी है और अमीरों का मालिक है। सभ्य और बुद्धिमान है। खड्ग का धनी और लंगर का मालिक है। मनका प्रकाशमान सुन्दर है मुलक और धन का दाता है। बड़ा दानी है युद्ध में पर्वत है, फरिश्तों की सिफ़ात वाला है और बड़ा प्रतापी है। ऐ शहनशाह औरंगजेब आलमगीर तू समय का सरदार है परन्तु धर्म से दूर है। यह सर्व प्रशंसा इसलिये की कि आप ऐसे होने पर भी धर्म से दूर हैं क्योंकि हिन्दू राजाओं की सहायता करते हो। इस पर गुरु महाराज इस प्रकार कहते हैं।

मनम कुशतनम कोहियां बुत परस्त।
कि आं बुत परसतंदो मन बुतशिकसत ॥६०॥

मैं पहाड़ी राजाओं को मारने वाला हूँ, क्योंकि वह बुत परस्त हैं और मैं बुत शकस्त अर्थात् मूर्ति तोड़नेवाला हूँ तू उनका सहायक बना हुआ है इस लिए दीनदार (धर्मात्मा) नहीं। क्यों प्यारे सज्जनो और भोले हिन्दू आर्यो अब भी कुछ संदेह है, कि गुरु गोबिन्दसिंह जी हिन्दुओं को किस दृष्टि से देखते थे औरंगजेब को किस दृष्टि से देखते थे। गुरु गोबिन्दसिंह जी की लड़ाइएं युद्ध या जंग हिन्दू राजाओं से हुए हैं; औरंगजेब से सीधे नहीं, मैं द्वितीय भाग में सिद्ध करूँगा, कि किस प्रकार से और किस कारण से गुरु जी के हिन्दू राजाओं से युद्ध हुए। वह अज्ञानी पुरुष हैं जो राजाओं को बादशाह के मोलीचुक या टोडी थे बताते हैं। यह दूसरे भाग में पढ़ें।

मैंने यह सर्व कुछ इसलिए लिखा है कि गुरुजी मुसलमानों के शत्रु नहीं थे और न हिन्दुओं के हितैषी थे। किंचिन्मात्र समय और नीत्यनुसार पर्वती राजाओं की अपेक्षा बादशाह की ओर झुके रहते थे। पहाड़ी राजाओं से स्वार्थसिद्धि का मेल था धार्मिक भाव से नहीं। इन

भागों में मैंने तीन सिद्धान्त स्थिर किए हैं। १. गुरु जी हिन्दू नहीं थे। २. हिन्दुओं की कोई रक्षा नहीं की और न कर सकते थे बल की न्यूनता और पन्थाई पन के कारण। ३ मुसलमानों से घृणा नहीं थी और न शत्रुता

दो और नवीन सिद्धान्त निश्चय किए हैं। एक तो बन्दा वैरागी गुरु महाराज का चेला नहीं था और न आप से कहीं मिला। २य गुरु महाराज ने कोई लड़ाई नहीं जीती जहां विजय हुई भी वहां भी स्थाई विजय नही हुई। यह भी आप लोकों को इन भागों में समझाया गया है। गुरु जी वीर पुरुष अवश्य थे परन्तु टिक कर दृढ़ रूप से युद्ध नहीं करते थे और न हिन्दुओं से मित्रता रखते थे।

हिन्दू बलवान थे

बहुत से लोक कहते हैं, सिखों ने हिन्दुओं की रक्षा की यह कथन मिथ्या है। गुरु महाराज के पास अल्प फौज थी धन बिलकुल नहीं था। बहुत ही संकुचित क्षेत्र था। जिसको दूसरे भाग में सिद्ध किया जायगा। हिन्दुओं के पास बहुत विस्तृत प्रान्त था बहुत से राज थे मरहठों से डरता बादशाह थर थर काँपता था स्वप्न में डर उठता था रात को मीठी नींद न आती थी। अन्त में मरहठों के कारण मुगल राज्य का नाश हुआ।

गुरु जी महाराज बड़े वीर थे परन्तु आनन्दपुर के किले में उनकी जो दशा थी गुरु सोभा ग्रन्थ में यूँ बयान की है। देखो तवारीख खालसा ज्ञानी लालसिंह कृत पृ. ८७२।

इसी भान्त बहुत दिन गए। नगर लो ठाढ़े सभ भए।
दरके आगे करी पुकार। अन्न बिन जीया जाए हमार।
देखो यह हवाल अब भयो। उडयो मास हाड अब रहयो।

बिन भोजन जीवन अब नाहीं। वह भी जह हैं सांझ सबाहिं।

कितना दर्दनाक दृश्य है देवियों की बुरी दशा बच्चे चिल्ला रहे हैं, बूढ़े तड़प रहे हैं। लेखकों ने इस दृश्य को दुखित लेखनी से लिखा है। गुरु जी महाराज धीर बीर सैनापति हैं। किला छोड़ना नहीं चाहते। परन्तु सिख ठहरना नहीं चाहते बाहिर से कोई सहायता की आशा नहीं किले से बाहिर कोई मित्र नहीं। सिवाय प्रभु के कोई आश्रय नहीं। बहुत से सिख बेदावे लिखकर चले गए अर्थात् गुरु की सिखी छोड़ दी गुरु जी किला छोड़ने के लिए विवश हो गए। जाएं तो कहां और रहें तो कहां। दो लाख फौज किला आनन्दपुर घेरे पड़ी। पहाड़ी राजे कह रहे हैं आनन्दपुर छोड़ दो हमारा प्रान्त छोड़ दो हम आपको कुछ नहीं कहेंगे कि बहुना गुरु जी को अन्त में किला छोड़ना पड़ा। और सरसा नदी पर बहुत से सिख मारे गए। क्या कहें खालसा जी चमकौर में समाप्त हो गया हिन्दुओं की रक्षा की बात तो दूर रही अपनी ही रक्षा न कर सके।

नोट—सर्व महानुभावों को विदित हो कि हम इस विषय पर प्रत्येक समय शास्त्रार्थ करने को तय्यार हैं ।

अथवा शंका समाधान करना हो तो भी हमारा दरबार खुला है ।

खालसा इतिहास दर्पण का दूसरा, तीसरा और चौथा भाग भी शीघ्र आपके सामने आ रहा है । जरा साहस दिखाइये !

रुद्रानन्द

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तकालय
पु परिग्रहण क्रमांक 5097
दयानन्द महिला महा त्र

हमारी कुछेक अनुभूत औषधियां

१—सन्तति—निरोध

इस औषधि के सेवन से सन्तानोत्पत्ति रुक जाती है। स्त्री को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचती।

मूल्य केवल २) कोर्स नौ दिन

२—कालकूट—वटिका

यह दर्द बीला अर्थात् पेटशूल, दर्द गुर्दा जोड़ों का दर्द अर्थात् गठियादि दर्दों को नाश करती है। यह गोली हमारी ४० वर्ष की अनुभूत है। एक मास सेवन से दर्द गुर्दा सदैव के लिए नष्ट हो जाता है। मूल्य १०० गोली २) रुपया। यह प्रयोग कोई बनाना चाहे तो बता भी सकते हैं।

३—ऋतु—शोधक

इसके सेवन से ऋतु का प्रत्येक दोष दूर हो जाता है, और स्त्री का शरीर नीरोग हो जाता है।

मूल्य केवल १०) रुपया, कोर्स चालीस दिन

★

प्राप्ति स्थान :—

सावित्री भवन, गली खजूर वाली, वार्ड नं० ४

मकान नं० ३२२, शाहाबाद,

जिला करनाल।

आर्य प्रेस लिमिटिड, निकलसन रोड, अम्बाला छावनी।